RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल-011/2015-17

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्षः 76, अंक : 6 एक प्रति 2 : रुपये

कुल पृष्ठ : 8

रविवार 12 मई, 2019

विक्रमी सम्वत् 2076, सृष्टि सम्वत् 1960853120

दयानन्दाब्द : 195 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये

आजीवन शुल्क : 1000 रुपये

दूरभाष : 0181-2292926, 5062726

E-mail: apspunjab2010@gmail.com,

www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष-76, अंक : 6, 9-12 मई 2019 तदनुसार 29 वैशाख, सम्वत् 2076 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

हाथ उठाकर नमस्कार

ले०-स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

वीती यो देवं मर्तो दुवस्येदग्निमीळीताध्वरे हविष्मान्।
होतारं सत्ययजं रोदस्योरुत्तानहस्तो नमसा विवासेत्॥

-ऋ० ६।१६।४६

शब्दार्थ-यः = जो **मर्तः** = मनुष्य **वीती** = कान्ति से **देवम्** = भगवान् की **दुवस्येत्** = परिचर्या करता है, और **हविष्मान्** = श्रद्धासम्पन्न होकर, **हविः** = सामग्रीवाला होता हुआ **अध्वरे** = यज्ञ में **अग्निम्** = भगवान् की **ईळीत** = पूजा करता है, वह **रोदस्योः** = द्यावापृथिवी के **सत्ययजम्** = ठीक-ठीक मिलाने वाले **होतारम्** = महादानी को **उत्तानहस्तः** = उत्तानहस्त होकर, ऊपर हाथ उठाकर **नमसा** = नमस्कार से **विवासेत्** = सत्कार करे।

व्याख्या-मनुष्य भगवान् की पूजा रूखे-फीके ढंग से न करे, अर्थात् भगवान् की आराधना के समय भक्त के हृदय में तेजस्वी और कमनीय भाव होने चाहिएँ। ऋग्वेद [६।१६।४१] में आदेश है-**'प्र देवं देववीतये भरता वसुवित्तमम्'**-सर्वाधिक धनी भगवान् को भगवत्प्राप्ति के लिए धारण करो। धन मत चाहो, धनी को चाहो। भगवान् सबसे अधिक धनी है। उसको धारण करो। भगवान् मिल जाए, भगवान् अपना हो जाए तो फिर भगवान् का सब-कुछ हमारा ही है, अतः उसे ही चाहो। दोनों मन्त्र-खण्डों को मिलाकर पढ़ने से भाव निकलता है-भगवान् को प्राप्त करने के लिए शान्ति से भगवान् की पूजा करो, अर्थात् उसकी धारणा करो। यज्ञ में अग्नि की पूजा=भगवान् की पूजा करो। यज्ञ का उद्देश्य भगवान् और ज्ञानी की पूजा है। ऋग्वेद का आरम्भ है-**अग्निमीळे** = मैं अग्नि की स्तुति करता हूँ। इसका भाव भी यही है कि अग्नि को, भगवान् को, ज्ञान को धारण करो-**'आ ते अग्न ऋचा हविर्हृदा तष्टं भरामसि'** [ऋ० ६।१६।४७] = हे अग्रणी भगवान्! तुझे मन्त्रों, से, हृदय से तय्यार की हुई हवि भेंट करते हैं। हृदय से तय्यार की हुई हवि स्पष्ट ही श्रद्धा और भक्ति की भावना है, अतः **'अग्निमीळीताध्वरे हविष्मान्'** का अर्थ हुआ 'श्रद्धाभक्तिसम्पन्न होकर यज्ञ में भगवान् का पूजन करे।'

गुरु के पास, राजा के पास, वैद्य के पास, विद्वान् के पास, संन्यासी तथा किसी अन्य मान्य के पास रिक्त हाथ जाने का निषेध है। कुछ-न-कुछ हाथ में लेकर ही उनके पास जाने का विधान है। भगवान् के पास जाते हुए क्या लेकर जाएँ? संसार में जो कुछ है सभी उसी का है। संसार में एक भी पदार्थ ऐसा नहीं, जिसे हम अपना कहकर भगवान् की भेंट धर सकें। सब-कुछ उसी का दिया हुआ है, अतः उसको-**'उत्तानहस्तो नमसा विवासेत्'** = हाथ उठाकर नमस्कार से पूजा करे। यजुर्वेद [४०।१६] के मन्त्र-खण्ड **'भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम'** में भी यही बात कही है। भाव यह है कि नम्रता से आत्मसमर्पण कर दे। इससे एक ध्वनि और भी निकलती है कि पारस्परिक नमस्कार के समय हाथ ऊपर उठाने चाहिएँ।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

प्रधान मंत्री
Prime Minister

नई दिल्ली
12 अप्रैल, 2019

श्री सुदर्शन शर्मा जी,

भारतीय नववर्ष की शुभकामनाएं भेजने के लिए आपका आभार। आपके स्नेहिल शब्दों ने मुझे राष्ट्र की सेवा के लिए निरंतर कार्य करने की नई ऊर्जा और प्रेरणा दी है।

विक्रम संवत 2076 आपके और आपके परिवार के जीवन में सुख, शांति और समृद्धि लाए।

आपका,

(नरेन्द्र मोदी)

श्री सुदर्शन शर्मा
गुरुदत्त भवन चौक
किशनपुरा, जालन्धर शहर
पंजाब- 144004

चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादौ द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवोमर्त्याऽऽ आविवेश॥ -यजु० १७.९१

भावार्थ-इस मन्त्र में अलङ्कार से परमात्मा का कथन है। जैसे कोई ऐसा बैल हो जिसके चार सींग, तीन पाँव, दो सिर, सात हाथ, तीन प्रकार से बंधा हुआ बार-बार बोलता हो, ऐसे बैल की उपमा से प्रभु के स्वरूप का निरूपण किया है। चार दिशाएँ सींगवत् तीन काल वा तीन भुवन पादवत्, पृथिवी और द्युलोक दोनों शिरवत् महत्तत्त्व, अहङ्कार, पाँच भूत ये सात प्रभु के हाथवत् हैं, सत्, चित् आनन्द (इन तीन) स्वरूप से विराजमान, सब सुखों की वर्षा करने वाला, वेद ज्ञान का सदा उपदेश कर रहा है। वह महादेव, मरणधर्मा मनुष्यों और सब नश्वर पदार्थों में व्यापक है, ऐसे प्रभु को जानना चाहिये।

आयुर्मे पाहि प्राणं मे पाह्यपानं मे पाहि व्यानं मे पाहि चक्षुर्मे पाहि श्रोत्रं मे पाहि वाचं मे पिन्व मनो मे जिन्वात्मानं मे पाहि ज्योतिर्मे यच्छ॥ -यजु० १४.१७

भावार्थ-परमात्मन्! आप कृपा करके हमारे आयुः, प्राण, अपान, व्यान, नेत्र, श्रोत्र, वाणी, मन, देह और इस चेतन जीवात्मा की रक्षा करते हुए मुझे यथार्थ ब्रह्मज्ञान प्रदान करें, जिससे हम आपके दिये मनुष्य जन्म को सफल कर सकें। भगवन्! आयुः, प्राण, नेत्र, श्रोत्र, वाणी, मन आदि की रक्षा और इन की नीरोगता के बिना, हमारा जीवन ही दुःखमय हो जाएगा, इसलिए आपसे इनकी रक्षा और प्रसन्नता की भी हम प्रार्थना करते हैं कृपा करके इस प्रार्थना को अवश्य स्वीकार करें।

पारिवारिक कल्याणार्थ यज्ञ

ले.-पं. वेदप्रकाश शास्त्री, शास्त्री भवन, 4-E, कैलाशनगर, फाजिलका, पंजाब

1. ओ३म् स्वस्तितं मे सुप्रात: सुसायं सुदिवं सुमृगं सुशकुनं मे अस्तु। सुहवमग्ने स्वस्त्यमर्त्यं गत्वा पुनरायाभिनन्दन् स्वाहा।।

अथर्व. 19.8.3

हे परमात्मन् देव! मेरे लिए प्रभातवेला सुन्दर हो, सायंकाल सुन्दर हो, दिन सुखद हो। पशुओं का विचरण करता हुआ समूह एवं कलख करता हुआ सुन्दर पक्षियों का झुंड मेरे लिए अत्यन्त आह्लादकारी हो। हे अग्ने! स्वप्रकाश, ज्ञानस्वरूप प्रभो! सुन्दर लेनदेन अर्थात् ग्राह्यवस्तु जीवन में सुख-शान्तिदायक हो। हे परमेश्वर! अविनश्वर अर्थात् अमृतमय आनन्द को प्राप्त करवा कर सबको प्रसन्न एवं आनन्दित करते हुए पुन: प्राप्त हो।

2. ओ३म् योगां प्रपद्ये क्षेमं च प्रपद्ये प्रपद्ये योगं च नमोऽहोरात्राभ्यामस्तु स्वाहा।।

अथर्व. 19/8/2

हे परम पिता परमेश्वर! अलभ्य वस्तु की प्राप्ति और उस प्राप्त वस्तु की सुरक्षा की स्थिति प्राप्त करुं। प्राप्त वस्तु की सुरक्षा करते हुए नवीन पदार्थ प्राप्त करुं। दिन और रात्रि दोनों से मैं अन्न एवं आदर-सम्मान प्राप्त करुं। दोनों से मेरी प्रशंसा हो। ये दोनों ही मेरे अनुकूल हों। अत: आपको अनेकश: नमस्कार हो।

३. ओ३म् उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवान् यज्ञेन बोधय।

आयु: प्राणं प्रजां पशून् कीर्तिं यजमानं च वर्धय स्वाहा।। अथर्व. 19/63/1

हे ब्रह्मन् वेद के रक्षक विद्वान् पुरुष! आप उठें और अन्य विद्वानों को भी यज्ञ अर्थात् श्रेष्ठ व्यवहार से जगाएं, प्रबुद्ध बनाएं और श्रेष्ठ कर्म करने वाले यजमान की आयु, प्राण=आत्मबल, प्रजा-सन्तान, गो आदि पशु एवं कीर्ति को बढ़ाएं।

4. ओ३म् ब्रह्म होता ब्रह्म यज्ञा ब्रह्मणा स्वरवो मिता:।

अध्वर्युर् ब्रह्मणो जातो ब्रह्मणोऽन्तर्हितं हवि: स्वाहा।।

अथर्व. 19/42/1

ब्रह्म=वेद द्वारा होता अर्थात् यज्ञकर्ता, ब्रह्म=वेद एवं ब्रह्मा के द्वारा यज्ञा: = यज्ञ होते हैं। ब्रह्मणा = वेद के द्वारा यज्ञ स्तम्भ खड़े किए जाते हैं। ब्रह्मण: = वेद से अध्वर्यु अर्थात् यज्ञकर्ता प्रसिद्ध होता है। वेद के अन्दर विद्यमान हवि=हवन विधान है।

भावार्थ-वस्तुत: वेद द्वारा ही याजक, यज्ञ व्यवहार और यज्ञ विधान निश्चित होते हैं।

महर्षि दयानन्द ने ऋत्विज् की स्थिति अर्थात् संख्या स्पष्ट करते हुए संस्कार विधि में लिखा है-जो एक हो तो उसका नाम पुरोहित, दो हों तो ऋत्विक्, पुरोहित, तीन हों तो ऋत्विक पुरोहित और अध्यक्ष, और जो चार हों तो होता, अध्वर्यु, उद्गाता और ब्रह्मा।

वर्तमान समय में एक होने पर भी पुरोहित के स्थान पर उसे भी 'ब्रह्मा' के नाम से ही सम्बोधित किया जाता है।

5. ओ३म् ब्रह्म स्रुचो घृतवती: ब्रह्मणा वेदिरुद्धिता।

ब्रह्म यज्ञस्य तत्त्वं च ऋत्विजो ये हविष्कृत:। शमिताय स्वाहा।। अथर्व. 19/42/2

ब्रह्म=ब्रह्मणा=वेद द्वारा घी वाली स्रुचारुं=स्रुवा-चमचे, और वेद द्वारा ही वेदी स्थिर अर्थात् निर्धारित की गई है। वेद के द्वारा यज्ञ का तत्त्व और जो हवन करने वाले ऋत्विज् भी स्थिर किए हैं। शान्ति के लिए यह सुन्दर आहुति वेदवाणी द्वारा समर्पित है। हमारा यह कथन सत्य हो।

भावार्थ-वेद से ही यज्ञ के साधनों, यज्ञकर्ताओं और विधियों का विधान किया जाता है।

6. ओ३म् अर्चत प्रार्चत प्रियमेधासो अर्चत।

अर्चन्तु पुत्रका उत पुरं न धृष्ण्वर्चत स्वाहा।।

अथर्व. 20/92/5

हे प्रिय हितकारिणी मेधाबुद्धि वाले मनुष्यो! दुर्गम्य पुर में प्राप्तव्य परमेश्वर की निर्भय होकर पूजा-अर्चना अर्थात् स्तुति करो। विशेषत: विस्तृत चिन्तन-मनन के साथ प्रार्थना-उपासना करो। ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अति प्रेम से विशेष भक्ति करो। आत्मा और अन्त: करण से भक्ति विशेष करो। गुणी सन्तानें भी उस ईश्वर की ही स्तुति-प्रार्थना-उपासना-जप आदि भक्तिपूर्वक करें।

भावार्थ-मनुष्यों को चाहिए कि अपने पुत्र पुत्रियों सहित प्रत्येक क्षण में, प्रत्येक पदार्थ में, प्रत्येक कर्म में परमात्मा की शक्ति को निहार कर आत्मा की उन्नति करें।

7. ओ३म् जिह्वाया अग्रे मधु मे जिह्वामूले मधूलकम्।

ममेदह क्रतावसो मम चित्तमुपायसि स्वाहा।।

अथर्व. 1/34/2

मेरी जिह्वा के अग्रभाग पर माधुर्य रस हो, जिह्वा के मूल में भी मधुवत् माधुर्य हो। मेरी बुद्धि और कर्म में भी तू अवश्य विराजमान हो। मेरे चित्त में भी तू सदा विराजे।

8. ओ३म् मधुमन्मे निष्क्रमणं मधुमन्मे परायणम्।

वाचा वदामि मधुमद् भूयासं मधुसंदृश: स्वाहा।। अ. 01.34.3

हे परमात्मन्! आपकी कृपा से निश्चय ही मेरा निकट जाना अर्थात् प्रवृत्ति की ओर अग्रसर होना-प्रेम पथ की ओर प्रवृत्त होना, सांसारिक पदार्थों की ओर आकर्षित होना भी मर्यादित और माधुर्य से परिपूर्ण हो अर्थात् हमारे व्यवहार में अन्यों के प्रति किसी प्रकार का तिरस्कार, व्यंग्य, उत्तेजना, गर्वोक्ति, कटुवचन का भाव न प्रतीत हो। मेरा बाहर जाना-निवृत्ति की ओर अग्रसर होना-श्रेय पथ पर चलना-निष्काम भाव से कार्य में प्रवृत्त होना अथवा सांसारिक पदार्थों का उपभोग करते हुए भी उनमें लिप्त न होना भी हमारे लिए माधुर्य एवं सहृदयतापूर्ण हो। वाणी से मैं ज्ञानपूर्ण माधुर्ययुक्त वचन बोलूं और मैं सदैव माधुर्य, विनम्रता, विनयशीलता सदृश गुणों से परिपूर्ण रहूँ।

भावार्थ-मेरा आना-जाना, पास और दूर होना, मेरी प्रवृत्ति और निवृत्ति ये सब लौकिक और पारलौकिक आचरित कार्य माधुर्यमय और प्रेमपूर्ण हों। जहां मेरी निक्रमण-निकट गमन की क्रिया मधुमय हो, वहां मेरी प्रत्येक परायण-परे हटने की क्रिया विरक्त होने की भावना भी माधुर्यपूर्ण हो।

हम सभी आवागमन, निरीक्षण-परीक्षण, अभ्यास आदि समस्त चेष्टाओं, मनसा-वाचा-कर्मणा शुभगुणों के ग्रहण और उपदेश में माधुर्य रस का संचार करें।

9. ओ३म् आत्मानं पितरं पुत्रं पौत्रं पितामहम्।

जायां जनित्रीं मातरं ये प्रियास्तानुप ह्वये।। अ. 9/5/30

आत्मीयजनों को, पिता को, पुत्र को, पौत्र को, दादा को, पत्नी को, जन्मदात्री माता को और जो प्रियजन हैं उन सभी को मैं आदर से बुलाता हूँ अर्थात् परिवार के सभी सदस्य परस्पर के साथ एवं प्रियजनों के साथ सम्मानपूर्वक वार्तालाप तथा सद्व्यवहार करें।

10. ओ३म् पूर्णात् पूर्णमुदचति पूर्णं पूर्णेन सिच्यते।

उतो तदद्य विद्याम यतस्तत् परिषिच्यते स्वाहा।।

अथर्व. 10/8/29

पूर्ण ब्रह्म से सम्पूर्ण जगत् उदय अर्थात् उत्पन्न होता है। पूर्ण ब्रह्म से सम्पूर्ण जगत् सींचा जाता है। और भी उस कारण को आज हम सब जानें, जिस कारण से वह सम्पूर्ण जगत् प्रकार से सींचा जाता है।

भावार्थ-यह सम्पूर्ण जगत् उस परम पिता परमेश्वर से उत्पन्न होकर वृद्धि को प्राप्त होता है और अन्त में लय हो जाता है। इसीलिए ईश्वर को कर्ता-धर्ता-संहर्ता कहते हैं। अत: वही परमात्मा स्तुति-प्रार्थना-उपासना के योग्य है, अन्य नहीं।

11. ओ३म् तुभ्यं वात: पवतां मातरिश्वा तुभ्यं वर्षन्त्वमृतान्याप:।

सूर्यस्ते तन्वे शं तपाति त्वां मृत्युर्दयतां मा प्र मेष्ठा: स्वाहा।।

अथर्व. 8/1/5

तेरे लिए अन्तरिक्ष में चलने वाला वायु शुद्ध रूप में बहे। तेरे लिए जलधाराएं अमृतपूर्ण वर्षा करें। सूर्य तेरे शरीर के लिए शान्तिपूर्वक तपे। मृत्यु तुझ पर दया करे। तू किसी प्रकार दु:खी मत होवे अर्थात् दु:ख आ जाने पर भी सोच सकारात्मक बनी रहे।

सम्पादकीय

धर्म का त्याग ही संसार में अशान्ति का कारण

भगवान मनु ने कहा है कि शरीर जल से शुद्ध होता है, मन सत्यविचार सत्याचरण से, बुद्धि ज्ञान से तथा आत्मा विद्या और तप से शुद्ध होता है। इसे हमें इस प्रकार समझना चाहिए कि हमारे चार स्थानों को चार वस्तुओं की आवश्यकता होती है। शरीर के लिए अर्थ की क्योंकि भोजन के बिना शरीर की स्थिति नहीं है। मन के लिए काम, बुद्धि के लिए धर्म और आत्मा के लिए मोक्ष की आवश्यकता होती है। धर्म को छोड़कर यदि अर्थ और काम की प्राप्ति होती है तो मनुष्य स्वार्थी और कामी बन जाता है। जब तक बुद्धि अपनी धर्म की आवश्यकता को पूर्ण करके शरीर और मन की आवश्यकताओं का आश्रय नहीं लेगी, तब तक मन निस्वार्थ और निष्कामता की पवित्रता को ग्रहण नहीं कर सकता, उस दशा में आत्मा को मोक्ष का मार्ग सूझता ही नहीं। इन सबको उचित प्रकार से संचालन करने वाला धर्म है जिसकी आवश्यकता सबसे मुख्य है। धर्म की विवेचना बड़ी गहन है किन्तु मनु महाराज के एक वाक्य में कहा है– आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् अर्थात् जिस बात को तू अपने लिए पसन्द नहीं करता, उसे दूसरे के साथ मत कर। कोई मनुष्य पसन्द नहीं करता कि उसकी वस्तु कोई दूसरा व्यक्ति उठा ले जाए। कोई भी व्यक्ति अपने बच्चे को दूसरे के हाथ से मारा जाता हुआ देखकर प्रसन्न नहीं होगा। कुवचन, अन्याय, विश्वासघात, छल, कपट कोई भी व्यक्ति अपने लिए पसन्द नहीं करता तो प्रत्येक मनुष्य के लिए आवश्यक हो गया है कि दूसरे की वस्तु का अपहरण करना, अन्य प्राणी का हनन करना, दूसरे से कुवाक्य, अन्याय, विश्वासघात, छल, कपट का व्यवहार कभी न करे। तभी जीवन से अशान्ति दूर होगी और दुःख का लेश भी दिखाई न देगा। इसलिए यतोऽभ्युदयनिःश्रेयःसिद्धिः सः धर्मः अर्थात् जिसके द्वारा मनुष्यों का उत्थान हो और कल्याण की प्राप्ति हो वही धर्म है। यह धर्म की वैज्ञानिक और सार्वभौम परिभाषा है।

जब मनुष्य अपनी वस्तु के चुराए जाने पर दुख और दूसरे की वस्तु चुराने में हर्ष और उत्सुकता प्रकट करेगा। स्वयं कड़वा वचन भी न सुनेगा, अन्य को कुवाक्य कहने तथा अपमानित करने में आनन्द अनुभव करेगा। परनारी को कुदृष्टि से देखना, विश्वासघात, छल कपट, दूसरों को पीड़ा देना आदि कार्यों से नहीं ड़रेगा तो संसार में उसी प्रकार अशान्ति ,कलह, दु:ख बढते जाएंगे और मनुष्य पतित होते चले जाएंगे। बुद्धि के साथ धर्म के न होने से जो कुछ भी कर्म शरीर और मन से होगा उससे मनुष्य स्वार्थी और कामी बनता जाएगा। स्वार्थी और कामी मनुष्य के साथ कभी दैवी संपत् संगृहीत नहीं हो सकती। इस कारण आत्मा कभी मोक्ष की ओर प्रगति कभी नहीं करेगा।

शास्त्र में कहा गया है कि धर्मो रक्षति रक्षितः अर्थात् मनुष्य धर्म को त्याग देता है तो धर्म उसे नष्ट कर देता है और धर्म की रक्षा करता है तो धर्म उसकी रक्षा करता है। ठीक जिस प्रकार मनुष्य वस्त्रों को मैला कर लेगा तो वस्त्र उसे मैला गन्दा बना देता है और जो वस्त्रों को साफ करके पहनता है वस्त्र उसे साफ बना देते हैं। आज प्रायः देखा जाता है कि निर्धन, पददलित, अधिकारवंचित, श्रमजीवी आदि छोटी और मध्यमश्रेणी के लोग ही दुखी नहीं हैं किन्तु धनी, पदाधिकृत, शासक आदि उच्च से उच्च व्यक्ति भी शान्ति की अनुभूति नहीं कर रहा है। अधिकार, धन,शासन आदि के गौरव को प्राप्त करके भी अशान्त और दुखी है। इसका एकमात्र कारण यह है कि चारों ओर से लूट खसूट, रिश्वत, चोरबाजारी और विश्वासघात है, छल-प्रपञ्च है, धनी दूसरों का शोषण कर रहा है। जिसके हाथ में अधिकार है वह दूसरों को अन्याय से पीड़ित कर रहा है। परस्पर में विश्वास नहीं, थोड़े से मतभेद के कारण मानवता को छोडकर नृशंस हत्या करने को उद्यत हो जाता है। जब दूसरी ओर से उसके साथ यही व्यवहार होता है तो वह अधर्म अत्याचार कहकर शोर मचाता है और धर्म की दुहाई देता है। किन्तु दूसरे के साथ अनुचित व्यवहार करने वाले व्यक्ति ने कभी सोचा भी नहीं कि इसे भी इतना ही कष्ट पहुँच रहा होगा, जितना किसी अन्य व्यक्ति के बुरे व्यवहार ने मुझे पहुँचाया है।

जब धर्म की भावना दूर हो जाती है तो स्वार्थी और कामी बनकर मनुष्य जो कुछ भी करता है उसमें किसी का भला बुरा नहीं देखता। स्वार्थी दोषं न पश्यति के अनुसार वह धर्माधर्म के विवेचन से दूर होकर बुराईयों से बच ही नहीं सकता। ऐसा मनुष्य देखने में तो मानव प्रतीत होता है किन्तु उसका संचालन जिस आत्मा के द्वारा हो रहा है, वह दानवीय भावनाओं से भरा हुआ है। ऐसे लोगों की वृद्धि ने ही संसार से शान्ति को मिटाकर सर्वत्र अशान्त वातावरण उत्पन्न कर दिया है। आसुरी भावनाओं से भरा व्यक्ति कौन सा पाप नहीं कर सकता। आज से पाँच सहस्र वर्ष पूर्व महर्षि व्यास ने चिल्ला कर कहा–

ऊर्ध्वबाहु विरौम्येष न हि कश्चिच्छृणोति माम्।
धर्मादर्थश्च कामश्च स धर्मः किं न सेव्यते।।

अर्थात् मैं भुजा उठाकर चिल्ला रहा हूँ परन्तु कोई नहीं सुनता और जिस धर्म के द्वारा अर्थ काम की भली प्रकार से प्राप्ति होती है उस धर्म का पालन कोई नहीं करता। इसी कारण से मनुष्य के चरित्र के स्तर में धर्म का सर्वथा अभाव हो गया है, केवल अर्थ और काम रह गये जो अनेक अनर्थों की सृष्टि कर रहे हैं। दर्शनकार ने ठीक कहा है– उपदेश्योपदेष्टृत्वात् तत् सिद्धिरितरथाऽन्ध परम्परा, अर्थात् जहाँ धर्मोपदेशक ठीक होते हैं और सुनने वाले भी ठीक होते हैं वहीं धर्मार्थ काम मोक्ष की सिद्धि होती है। जहां सुनने सुनाने और आचरण का अभाव होता है वहाँ अन्ध परम्परा चल पड़ती है, पापाचार फैल जाते हैं। पापान्धकार में लोगों को सन्मार्ग दिखाई नहीं देता है। बस मनुष्य में नैतिकता का संचार करना ही धर्म का वास्तविक उद्देश्य है, किन्तु भोगवाद और प्रकृतिवाद ने मनुष्य को इतना अन्धा बना दिया है कि वह धर्म और ईश्वर नाम की किसी वस्तु को देखना नहीं चाहता। हमारे विचार में इस्लाम, ईसाइयत एवं हिन्दुओं में प्रचलित रूढ़िवादियों को ही लोग धर्म समझते हैं और उन रूढिवादों का नियामक और संचालक ईश्वर को मानते हैं। इस प्रकार धर्म और ईश्वर संसार में अज्ञानी लोगों के लिए झगडे के मूल कारण हैं। इसी तरह धर्म और ईश्वर को सब जगह से निकाला जा रहा है। किन्तु धर्म वह वस्तु है जो संसार को शांति देता है और लोगों को ऊँचा उठाता है। आचारप्रभवो धर्मः धर्मस्य प्रभुरच्युतः अर्थात् ऊँचे आचार का नाम धर्म है और उस धर्म के स्वामी का नाम ईश्वर है। धर्म और ईश्वर के इस व्यापक लक्षण को समझे बिना लोग इसका विरोध करते हैं। यह विरोध संसार में अनाचार और अशान्ति का हेतु है। क्योंकि सच्चे धर्म की शिक्षा के अभाव में विज्ञान की उच्च पढाई, साहित्य और इतिहास की बहुत सी परीक्षाएं भी मनुष्य को चरित्रवान नहीं बना सकती। जीवन के सभी क्षेत्रों में नैतिकता आवश्यक है जो मानवता उत्पन्न कर सके। इसका एकमात्र साधन धर्म है जिससे देश के चरित्र का स्तर ऊँचा हो सकता है। ऐसे व्यापक और सार्वभौम धर्म का सन्देश सुनाने के लिए वेद का मार्ग ही सफल मार्ग हो सकता है।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

महर्षि दयानन्द जी सरस्वती का शूद्रों के साथ महान उपकार

ले.-डा. शिवपूजनसिंह कुशवाह

महर्षि दयानन्द जी सरस्वती के प्रादुर्भाव के पूर्व शूद्रों, अछूतों व स्त्रियों के साथ अमानवता का व्यवहार किया जाता था। इनको समानाधिकार नहीं था। वेद-शास्त्रों के श्रवण करने तथा अध्ययन करने का प्रबल निषेध था। तत्कालीन सम्प्रदायप्रवर्तकों के इनके प्रति निम्नलिखित कठोर आदेश थे-

'श्रवणाध्ययनार्थप्रतिषेधात् स्मृतेश्च।'

(वेदान्तदर्शन अ. १, पा. ३, सू. ३८)

आद्य श्री स्वामी शङ्कराचार्य जी महाराज का भाष्य-

"इतश्च न शूद्रस्थाऽधिकार: यदस्य स्मृते: श्रवणाध्ययनार्थप्रतिषेधो भवति, वेदश्रवणप्रतिषेधो वेदा-ध्ययनप्रतिषेधस्तदर्थज्ञानानुष्ठीनयोश्च प्रतिषेध: शूद्रस्य स्मर्यते। श्रवणप्रतिषेधस्तावत्-अथास्य वेदमुपश्रृण्वतस्त्रपुजतुभ्यां श्रोत्र-प्रतिपूरणम् इति। पद्यु ह वा एतच्छमशानं यच्छूद्रसस्तस्माच्छूद्र-समीपे नाध्येतव्यम् इति च। अतएवाऽध्ययनप्रतिषेध:। यस्य हि समीपेऽपि नाऽध्येतव्यं भवति, स कथमश्रुतमधीयीत। भवति च वेदोच्चारणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीरभेद इति। अतएव चाऽर्थादर्थज्ञानानुष्ठानयो: प्रतिषेधो भवति-'न शूद्राय मतिं दद्यात्' इति, 'द्विजातीनाम ध्ययनमिज्जा दानम्' इति च। येषां पुन: पूर्वकृत संस्कारवशाद् विदुरधर्मव्याधप्रभृतीनां ज्ञानोत्पत्तिस्तेषां न शक्यते फलप्राप्ति: प्रतिषेद्धुम्, ज्ञानस्यैकान्तिक-फलत्वात्। 'श्रावयेच्चतुरो वर्णन्' इति चेतिहासपुराणाधिगमे चातुर्वर्ण्यस्याऽधिकास्मरणात्। वेद-पूर्वकस्तु नास्त्यधिकार: शूद्राणामिति स्थितम्।"

भाष्य का अनुवाद-

"और इससे भी शूद्र का विद्या में अधिकार नहीं है, क्योंकि स्मृति उसके लिए श्रवण, अध्ययन, और अर्थ का निषेध करती है। स्मृति में शूद्र के लिए वेद के श्रवण, वेद के अध्ययन और वेदार्थ के ज्ञान और अनुष्ठान का निषेध है। 'अथास्य वेदमुप०' (समीप से वेद का श्रवण करने वाले शूद्र के दोनों कानों को सीसे और लाख से भर दे) और 'पद्यु ह वा एतच्छ्मशानं०' (शूद्र नि:सन्देह जङ्गम श्मशान है, इसलिए शूद्र के समीप में अध्ययन नहीं करना चाहिए) इस प्रकार श्रवण का निषेध है। इसी से अध्ययन का निषेध भी सिद्ध होता है, क्योंकि जिसके समीप में अध्ययन किस प्रकार कर सकता है? यदि शूद्र वेद का उच्चारण करे, तो उसकी जिह्वा काट देनी चाहिए। यदि वेद को याद करे, तो उसके शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर देने चाहिएं, ऐसी स्मृति भी है। इसी हेतु से अर्थात् शूद्र के लिए अर्थज्ञान और अनुष्ठान का भी निषेध होता है-'न शूद्राय०' (ब्राह्मण को चाहिए कि शूद्र को वेदार्थ-ज्ञान न दे) और 'द्विजातीना०' (केवल द्विजों के लिए ही अध्ययन, यज्ञ और दान का विधान है)। परन्तु विदुर, धर्मव्याध आदि, जिनको पूर्वकर्म के संस्कारों से ज्ञान उत्पन्न हुआ था, उनके लिए फलप्राप्ति का निषेध नहीं किया जा सकता, क्योंकि ज्ञान अव्यभिचरित फल उत्पन्न करता है। 'श्रावयेच्च०' (चारों वर्णों को सुनावे) इस प्रकार स्मृति, इतिहास और पुराण का ज्ञान प्राप्त करने में चारों वर्णों का अधिकार बतलाती है। इससे सिद्ध हुआ कि वेदाध्ययनपूर्वक ज्ञान प्राप्त करने का शूद्र को अधिकार नहीं है।"

श्री रामानुजाचार्य और शूद्र-

वेदान्तदर्शन १,३,३८ के "श्रीभाष्य" में श्री रामानुजाचार्य जी इस सूत्र का भाष्य यों करते हैं-

"(शूद्रस्य वेदश्रवणतद-ध्ययनतदर्थानुष्ठानानि प्रति-षिध्यन्ते। पद्यु हु वा एतत् श्मशानं यत्छूद्र: तस्मात् शूद्रसमीपे नाध्येतव्यम्-(वसिष्ठस्मृति १८,१), तस्मात् शूद्रो बहुपशुरयज्ञिय इति। बहुपशु: पशुसदृश इत्यर्थ:। अननु-श्रृण्वतोऽध्ययनतदर्थज्ञान-तदर्यानुष्ठानानि न सम्भवन्ति। अतस्तान्यपि प्रतिषिद्धान्येव। स्मर्यते च श्रवणादिनिषेध:। अथ हास्य वेदमुश्रृण्वतस्त्रपुजतुभ्यां श्रोत्रप्रति पूरणमुदाहरणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीरभेद इति। न चास्योपदिशेद् धर्मम् न चास्य व्रतमादिशेत्(मनु० ४,८०)इति च। अत: शूद्रस्यानधिकार इति सिद्धम्।"

अर्थात्-"शूद्र के लिए वेद का श्रवण, अध्ययन और उनका अनुष्ठान व आचरण प्रतिषिद्ध है। शूद्र चलता-फिरता श्मशान है। अत: उसके समीप अध्ययन न करना चाहिए; वह पशु समान है। जब वेद का श्रवण ही उसके लिए निषिद्ध है, तो अध्ययन, उनके अर्थज्ञान और वैदिक आचरण तो संभव ही नहीं। शूद्र वेद सुन ले, तो उसके कानों को सीसे और लाख से भर देना चाहिए। वेदमन्त्र का वह उच्चारण करे, तो उसकी जीभ काट देनी चाहिए और वेदमन्त्र को याद करे, तो उसके शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर डालने चाहिएं। इसलिए शूद्र का वेदाध्ययन और ब्रह्मविद्या में सर्वथा अनधिकार है।"

पुष्टिमार्ग के आचार्य श्री वल्लभाचार्य जी और शूद्र-

'ब्रह्मसूत्र' १,३,३८ पर भाष्य करते हुए वे लिखते हैं:-

"दूरे ह्यधिकारचिन्ता वेदस्य श्रवणाध्ययनमर्थज्ञानं त्रयमपि तस्य (शूद्रस्य) प्रतिषिद्धम्। तत्सन्नि-धावन्यस्य च। अथास्य वेदमुपश्रृण्वतस्त्रयुजतुभ्यां श्रोत्रपरि-पूरणमिति। पद्यु ह वा एतत् श्मशानं यच्छूद्रस्तत्-समीपे नाध्येतव्यमिति। उच्चारणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीरभेद: (गौतम स्मृ० १२,४)। स्मृतियुक्त्याऽपि वेदार्थे न शूद्राधिकार इत्याह। स्मृतेश्च 'वेदाक्षरविचारेण शूद्र: पतति तत्क्षण त्' (पराशर स्मृ० १,६३) इति। स्मार्तपौराणिकज्ञानादौ तु कारणविशेषेण शूद्रयोनौ गतानां महतामधिकार:। तथापि न कर्म-जातिशूद्राणाम्। तस्मान्नास्ति वैदिके क्वचिदपि शूद्राधिकार इति स्थितम्।"

अर्थात्-"शूद्र के लिए वेदश्रवण करने, पढ़ने और उसके अर्थज्ञान तीनों का निषेध है। अत: उसके वेदाधिकार की चिन्ता तो बहुत दूर का विषय है। शूद्र यदि वेद के मन्त्रों को सुन ले, तो उसके कानों को सीसे और लाख से भर देना चाहिए। उच्चारण करे, तो उसकी जीभ काट लेनी चाहिए, मन्त्र याद कर ले, तो उसके शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर देने चाहिएं। वेद के एक अक्षर के विचार से भी शूद्र उसी क्षण में पतित हो जाता है, ऐसा पराशर-स्मृति आदि में कहा है। स्मृति और पुराणों के ज्ञान में भी अधिकार किसी विशेष कारण शूद्रकुलोत्पन्न महापुरुषों का ही है; जाति या जन्म से शूद्रों का नहीं। इसलिए वैदिक ज्ञान में तो कहीं भी शूद्रों का अधिकार नहीं है, यह सिद्ध होता है।"

द्वैतवाद-प्रचारक श्री मध्वाचार्य (स्वामी आनन्द तीर्थ जी महाराज) और शूद्र-

वेदान्त दर्शन १,३,३८ पर 'अणुभाष्य' में वे लिखते हैं:-

"श्रवणे त्रपुजतुभ्यां श्रोत्रपरिपूरणम्, अध्ययने जिह्वाच्छेद:, धारणे हृदयविदारणम् इति प्रतिषेधात्। 'नाग्निर्न यज्ञ: शूद्रस्य तथैवाध्ययनं कुत:। केवलैव तु शुश्रूषा त्रिवर्णानां विधीयते' इति स्मृतेश्च। विदुरादीनां तूत्पन्नज्ञानत्वान्न कश्चिद् विशेष:।"

अर्थात्-"यदि शूद्र वेद के शब्द को सुन ले तो उसके कान को सीसे और लाख से भर देना चाहिए और वेद के अध्ययन करने पर उसकी जिह्वा काट डालनी चाहिए और अर्थ का ज्ञान व निश्चय करने पर उसके हृदय के टुकड़े कर देने चाहिएं। शूद्र को अग्निहोत्र, यज्ञ, अध्ययनादि का अधिकार नहीं, उसका कार्य केवल तीन वर्णों की सेवा है, ऐसा स्मृति में कहा है। विदुर आदि को जन्म से ही ज्ञान उत्पन्न हो गया था। अत: उसमें कुछ विशेषता नहीं।"

श्री निम्बार्काचार्य जी और शूद्र-

ब्रह्मसूत्र १,३,३८ का भाष्य "वेदान्त-पारिजातसौरभ" में लिखा है:-

"शूद्रो नाधिकियते। शूद्रसमीपे नाध्येतव्यभित्यादिना तस्य वेदश्रवणादिप्रतिषेधात्। न चास्योपदिशेद् धर्ममित्यादि स्मृतिश्च।"

अर्थात्-"शूद्र का वेदाध्ययन का अधिकार नहीं है। शूद्र के समीप अध्ययन नहीं करना चाहिए। इस विधान से उसके वेदश्रवणादि का निषेध है। स्मृति में भी कहा है कि शूद्र को धर्म का उपदेश नहीं देना चाहिए।"

इन पाँच आचार्यों ने शूद्रों के साथ किस प्रकार का अत्याचार व अमानवता का व्यवहार किया है।

कवष, ऐलूष, ऐतरेय ऋषि कौन थे? क्या वे ब्राह्मण थे? नहीं, वे जन्मना शूद्र, दासीपुत्र होते हुए भी वेदामन्त्रों के प्रचारक थे तथा ऋग्वेद के ब्राह्मण 'ऐतरेय-ब्राह्मण' को बनाने वाले 'ऐतरेय' दासीपुत्र थे।

श्री रामानुजाचार्य जी वैष्णव मत के थे और वैष्णव मत के प्रवर्तक "शठकोप" थे जो कंजर जाति के थे।

स्वामी महेश्वरानन्दगिरि: महामण्डलेश्वर,

(क्रमश:)

वेदों में नारी की स्थिति

ले.-शिवरानारायण उपाध्याय, 73 शास्त्री नगर दादाबाड़ी, कोटा

वेदों में नारी से संबंधित लगभग 700 मंत्र मिलते हैं जिनसे वैदिक काल में नारी की स्थिति स्पष्ट रूप से जानी जा सकती है। वेद के अनुसार शिक्षा सभी के लिए आवश्यक है। स्त्री-पुरूष ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य शूद्र एवं घुमक्कड़ जाति के लोग सभी को वेद पढ़ने का अधिकार है-

यथेमां वाचं कल्यामीणावदानी जनेभ्यः।

ब्रह्म राजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय चस्वाय चारणाय।। यजु. 26.2

इस मंत्र से स्पष्ट रूप से मनुष्य मात्र को वेदाध्ययन का अधिकार है।

अथर्ववेद में कहा गया है-**ब्रह्मचर्येण कन्या ३ युवानं विन्दते पतिम्।**

स्त्रियां केवल वेदाध्ययन ही नहीं करती थी वरन् वेदों के छिपे हुए रहस्यों को भी उजागर करती थी। वेदों में 35 ऋषिकाएं भी हैं जिन्होंने ऋचाओं का दर्शन किया है। वे स्वयंवर प्रथा द्वारा अपना पति स्वयं चुनती थी। स्वयंवर में पचासों युवक उपस्थित होते थे उनमें से सर्वश्रेष्ठ एक को वह अपने पतिरूप में चुनती थी परन्तु यह कहीं वर्णन नहीं है कि सैकड़ों कन्याओं में से किसी एक को कोई युवक अपनी पत्नी होने के लिये चुने।

वेदों में स्त्री और पुरूष एक दूसरे के पूरक जाने जाते हैं।

अमोऽहमस्मि सा त्वं सामहमस्मयृक् त्वं द्यौरहं पृथिवी त्वं।

ता विववावहै संभवाव प्रजाया जनयवहै।अथर्व. 14.2.71

हे वधू! मैं ज्ञानवान हूँ वैसे ही तू ज्ञानवती है। मैं सामवेद हूँ और तू ऋग्वेद की ऋचा है। मैं सूर्य हूँ और तू पृथ्वी है। हम दोनों यहां पराक्रमी होवें और श्रेष्ठ संतान को जन्म दें।

समञ्जन्तु विश्वे देवा समापो हृदयानि नौ।

सं मातरिश्वा सं धातासमुदेष्ट्री दधातु नौ।। ऋ. 10.85.47

यज्ञ मण्डप में उपस्थित सभी विद्वान् सुनें। हम दोनों पति पत्नी के हृदय जल के समान मिले हुए हैं। हम दोनों की स्थिति प्राण एवं प्राणवायु, एक कलाकार एवं उसकी कृति और एक उपदेशक व श्रोता की सी है।

परिवार में वृद्धि तो वधू के आने के उपरान्त ही होती है।

सुमङ्गली प्रतरणी गृहाणां पत्ये श्वशुराय शंभू।

स्योना श्वश्वै प्रगृहान् विशेमान्।। अथर्व. 14.2.26

हे वधू। तू बड़ी मंगल करने वाली। घरों को बढ़ाने वाली, पति और श्वशुर के लिये शांति देने वाली तथा सासु के लिए आनन्द देने वाली! आ इस गृह में प्रवेश कर।

इस संसार सागर को वधू ही पार कराने वाली है-

भगस्य नावमा रोह पूर्णामनु पदस्वतीम्।

तयोप प्रतारय यो वरः प्रतिकाम्यः।। अथर्व. 2.36.5

हे वधू। ऐश्वर्य की भरी भरायी और अटूट नाव पर चढ़ और उस अपने घर को आदर पूर्वक पार लगा जो प्रतिज्ञा करके प्रीति करने योग्य है।

पितृ गृह में भी सभी उससे स्नेह करते हैं! पिता उसके जन्म के बाद से ही उसके लिये दहेज की व्यवस्था करने लगता है। अथर्व. 3.31.5 में कहा गया है-**त्वष्टा दुहित्रे वहतुं सुनक्ति** अर्थात् सूक्ष्मदर्शी पिता पुत्री को दायज अलग करके देता है।

अथर्ववेद 14.2.74 में वर्णित है कि ससुराल में पहुंचने पर सभी संबंधी गण वधू को उपहार देते हैं।

श्वशुर व सासु स्वर्ण आभूषण भी देते हैं। पतिगृह में वह गृह स्वामिनी बन जाती है।

आ क्रन्दय धनपते वर मामनसं कृणु। अथर्व. 2.36.6

हे धनों की स्वामिनी वधू। वर को आदर पूर्वक बुला और अपने मन को अनुकूल कर।

फिर कहा गया है-**सर्वं प्रदक्षिणं कृणु यो वरः प्रतिकाम्यः।**

इस वर को सर्वथा अपने दाहिनी तरफ कर!

परिवार में कन्या पर भी गर्व किया जाता है-

मम पुत्रः शत्रु हणोऽथो मे दुहिता विराट्। ऋ. 10.159.3

पतिगृह में नारी की स्थिति निम्न ऋचा में वर्णित है-

सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्र्वां भव।

ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवेषु भव।। ऋ. 10.85.46

श्वशुर, श्वश्रवा, ननद तथा देवर के लिये तू सम्राज्ञी बन। गृह में स्त्री की स्थिति ठीक वैसी ही है जैसी कि यज्ञ में ब्रह्मा की होती है। यज्ञ में ब्रह्मा की आज्ञा सभी को माननी होती है यही स्थिति घर में वधू की होती है। ऋ. 8.33.19 में कहा गया है-

अधः पश्यस्व मोपरि सन्तरां पादको हर।

मा ते कश्प्लवौ दृशान् स्त्रीहि ब्रह्मा बभूविथ।

नीचे देखकर चलो, ऊपर देखते हुए मत चलो। पांवों को ठीक से उठाते हुए चलो। चलते समय तुम्हारे निम्ना न दिखाई दें। देखों। घर में स्त्री ही ब्रह्मा के पद पर होती है।

वेदों में पुत्र की ही नहीं पुत्री की भी कामना की गई है।

अभ्रातघ्नी वरूण पशुघ्नी बृहस्पते।

इन्द्रा पतिघ्नीं पुत्रिणी मास्मभ्यं सवितर्वह।। अथर्व. 14.1.82

(वरूण) हे श्रेष्ठ, (बृहस्पते) हे वेदवाणी के रक्षक। (इन्द्र) हे बड़े ऐश्वर्य वाले (सवितः) हे प्रेरक वर। (आभ्रातघ्नी) भाईयों को न सताने वाली (अपशुघ्नीम्) पशुओं को न मारने वाली (अपतिघ्नी) पति को दुःख न देने वाली और (पुत्रिणीम्) श्रेष्ठ पुत्र-पुत्रियों को जन्म देने वाली (वधू) को (अस्मभ्यम्) हमारे हित के लिये (आ वह) तू ले चल।

आपात स्थिति में जैसे पति की असामयिक मृत्यु हो जावे अथवा वह नपुंसक हो तो नारी को परिवार की सलाह से नियुक्त पुरूष के साथ संबंध बनाकर संतान उत्पन्न कर लेने का अधिकार भी था।

कुहस्वित् दोषा वस्तोरीश्वना कुहाभिपित्वंकरतः कुहोषतुः को वां शयुत्रा विधवेव देवरं मर्य्यन योषा कृणुते सधस्थ आ।।

ऋ. 10.40.2

इस ऋचा में विधवा स्त्री को अपने देवर से शारीरिक संबंध बनाकर संतान उत्पन्न करने को कहा गया है। वेद में स्त्री-पुरूष को ऐश्वर्यमय जीवन व्यतीत करने को कहा गया है-

इदं हिरण्यं गुल्गुल्वयर्मोक्षो अथो भगः।

एते पतिभ्यस्त्वामदुः प्रतिक्रामाय वेत्तवे।।

अथर्व. 2.36.7

यह सुवर्ण और गुल्गुले और यह महात्माओं के योग्य ऐश्वर्य है। कन्या के पक्ष वालों ने पति पक्ष वालों के हितार्थ इस वधू को प्रतिज्ञापूर्वक पति के लिए दिया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वैदिक काल में नारी की स्थिति समाज में गरिमामय रही है।

योग-ध्यान, साधना शिविर सम्पन्न

आनन्दधाम (गढ़ी आश्रम) उधमपुर, जम्मू में आश्रम के मुख्य संरक्षक एवं निदेशक पूज्य महात्मा चैतन्यमुनि जी की अध्यक्षता एवं पूज्य मां सत्यप्रियायतिजी के सान्निध्य में दिनांक 15 से 21 अप्रैल तक निःशुल्क योग-ध्यान-साधना शिविर का आयोजन किया गया। जिसमें अनुभवी आचार्यों एवं महात्माओं द्वारा उपासना, प्राणायाम, योगासन आदि कराए गए तथा योगदर्शन का पठनपाठन भी कराया गया। शिविर में रोजड़ के आचार्य आत्मनजी विशेष रूप से पधारे हुए थे। आचार्यजी ने शिवरार्थियों की शंकाओं का समाधान भी कुशलतापूर्वक किया। श्रीरामभिक्षुजी ने प्राणायाम व योगासनों का अभ्यास कराया। मां सत्यप्रियायति तथा अन्य शिविरार्थियों के भजन होते रहे तथा पूज्य महात्मा चैतन्यमुनि जी के आध्यात्मिक प्रवचनों का शिवरार्थियों पर विशेष प्रभाव रहा। इस अवसर पर पूज्य स्वामी जी के ब्रह्मत्व में प्रतिवर्ष की भान्ति सामवेद पारायण-यज्ञ का आयोजन भी किया गया है। शिविर में हिमाचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर, गुजरात, पंजाब, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, उत्तराखण्ड आदि स्थानों से आए हुए लगभग 100 शिवरार्थियों ने भाग लिया। 21 अप्रैल को धर्म सम्मेलन एवं ऋषि लंगर का आयोजन भी किया गया। आगामी शिविर 15 से 22 सितम्बर तक लगाने का निर्णय भी लिया गया। -भारतभूषण आनन्द, आश्रम प्रधान

गायत्रीमन्त्र और स्वामी दयानन्द

ले.-डॉ. वेदप्रकाश उपाध्याय

गायत्रीमन्त्र का वैदिक संहिताओं में अद्वितीय महत्त्व का स्थान है। वेद ज्ञान-विज्ञान के आगार एवं भारतीय संस्कृति के मूलस्त्रोत हैं। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वेदों के प्रचार-प्रसार में जो योगदान दिया, उसके लिए भारत उनका ऋणी रहेगा। स्वामी दयानन्द के द्वारा वेदों पर किए गए भाष्य आध्यात्मिक पक्ष की प्रधानता को लिए हुए हैं, जिनमें वेदों का दार्शनिक पक्ष अत्यन्त विशद रूप से प्रकाशित होता है। वेदों में अनेक गायत्री छन्द हैं, जो भाषा और भाव की दृष्टि के अत्यन्त हृदयग्राही हैं। ऋग्वेद का प्रारम्भ ही गायत्री छन्द से हुआ है। उपनयन-संस्कार में जिस गायत्रीमन्त्र का उपदेश दिया जाता है, वह सावित्री गायत्रीमन्त्र है। यह मन्त्र ऋग्वेदसंहिता ३,६२,१० सामवेदसंहिता १४६२, वाजनेयी यजुर्वेदसंहिता ३,३५;२२,-६;३०,२;३६,३; तैत्तिरीय यजुर्वेद संहिता १,५,६,४;४,१,१,१,१ और तैत्तिरीय आरण्यक १,११,२ में उपलब्ध है।

गायत्रीमन्त्र-

तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य-धीमहि।

धियो यो नः प्रचोदयात्।।

(ऋग्वेदसंहिता ३,६२,१०)

उपर्युक्त गायत्रीमन्त्र का उच्चारण ओ३म् भूर्भुवः स्वः'' महाव्याहृति को मन्त्र के प्रारम्भ में लगाकर किया जाता है। गायत्रीमन्त्र में जिन वर्णों के नीचे पड़ी रेखा है, वे अनुदात्त हैं। अनुदात्तस्वरों का उच्चारण नीचे स्वर से किया जाता है। जिन वर्णों के ऊपर खड़ी रेखा खींची हुई है, वे स्वरित कहलाते हैं। स्वरित का उच्चारण उच्चस्वर व नीचे स्वर को संयुक्त करके किया जाता है। उदात्त स्वर का कोई चिन्ह नहीं होता और उसका उच्चारण ऊँचे स्वर से किया जाता है। स्वरित के बाद तथा अनुदात्त से पहले आने वाले चिन्हरहित अक्षर प्रचस्वर से युक्त होते हैं और उनका उच्चारण उदात्त की तरह ही उच्चस्वर से किया जाता है। स्वामी दयानन्द जी ने इन स्वरों का परिचय पाणिनीय सूत्रों की व्याख्या में दिया है।

गायत्री एक छन्द का नाम है, जिसमें तीन पाद होते हैं तथा प्रत्येक पाद में आठ वर्ण होते हैं। इस बात को पिङ्गलच्छन्दस्सूत्र के वैदिक प्रकरण में 'गायत्री वसवः' सूत्र से स्पष्ट किया गया है। आठ की संख्या को द्योतित करने के लिए सूत्र में 'वसु' शब्द का प्रयोग किया गया है। गायत्री शब्द का निर्वचन करते हुए यास्क ने 'त्रिगमना' शब्द का प्रयोग इस छन्द के तीन पादों को द्योतित करने के लिए किया है। स्वामी ब्रह्ममुनि ने भी त्रिगमना शब्द का भाव प्रकट करते हुए कहा है, कि तीन पादों से जिसका गमन हो, वह त्रिगमना अर्थात् गायत्री है। यास्क ने गायत्री शब्द का अर्थ निम्न प्रकार से किया है-

१. गायत्री शब्द 'स्तुतिकरना' अर्थ वाली गै='गाय्' धातु से बना है। निघण्टु में 'गाय्' धातु को 'पूजा करना' अर्थवाली माना गया है। 'गाय्' धातु में 'अमिनक्षियजिब-धिपतिभ्योऽवन् (उणा० ३,१०५) सूत्र से धातु के बाहुलक होने के कारण अत्रन् प्रत्यय लगाकर 'गायत्र' शब्द बनाया गया है, फिर उसी से स्त्रीलिङ्ग में गायत्री शब्द बना है। इस प्रकार गायत्री शब्द का अर्थ हुआ-ऐसा मन्त्र जिससे स्तुति या पूजन कर्म किया जाए।'

२. तीन पादों से युक्त होने के कारण गायत्री को त्रिगमना भी माना गया है और इस शब्द की निरुक्ति त्रिगाय शब्द का विपर्यय करके की गई है। गाय का अर्थ-गमन है।

३. वेदोपदेश करने वाले परमेश्वर से निःसृत होने के कारण इसे गायत्री कहा जाता है। ऋग्वेद का सर्वप्रथम मन्त्र गायत्री छन्द में ही है, जो 'अग्निमीळे' से प्रारम्भ होता है। तत्सवितुर्वरेण्यम्० मन्त्र में गायत्री के सभी अर्थ सन्निहित हैं। यह मन्त्र स्तुति व पूजन में प्रयुक्त होने के कारण प्रथम अर्थ को, तीन पादों से युक्त होने के कारण परमेश्वर से इसका निःसृत होना तो स्वतः सिद्ध ही है।

गायत्री का महत्त्व अनेक स्थलों पर प्रदर्शित है। स्तुति करने वाले की रक्षा करने के कारण गायत्री मन्त्र का गायत्रीत्व सिद्ध है। गायत्री के महत्त्व का ज्ञान इस बात से भी होता है, कि वेदों के किसी अन्य मन्त्र का उतना प्रचार नहीं है, जितना इस गायत्री मन्त्र का।

गायत्री मन्त्र का अर्थ स्वामी दयानन्द जी द्वारा इस प्रकार किया गया है-'हे मनुष्यो! हम सब लोग, जो हम लोगों की बुद्धियों को उत्तम गुण कर्म और स्वभाव में प्रेरित करे, उस सम्पूर्ण संसार को उत्पन्न करने वाले, सम्पूर्ण ऐश्वर्य से युक्त, स्वामी और सम्पूर्ण ऐश्वर्य के दाता, प्रकाशमान, सबके प्रकाश करने वाले, सर्वत्र व्यापक अन्तर्यामी के उस सबसे उत्तम प्राप्त होने योग्य, पाप-रूप दुःखों के मूल को नष्ट करने वाले प्रभाव को धारण करें।

गायत्री में प्रयुक्त 'भर्गः' और 'धीमहि' शब्द अनेकार्थक हैं। 'भर्गः' शब्द के ३ अर्थ सायणभाष्य में मिलते हैं-

१. स्वयंज्योति परब्रह्मात्मक तेज।

२. पापों का तापक तेजोमण्डल।

३. अन्न।

स्वामी दयानन्द जी ने भर्गः शब्द का अर्थ 'पापरूपी दुःखों के मूल को नष्ट करने वाला' प्रभाव किया है।

'धीमहि' का अर्थ सायणभाष्य में 'ध्यान करना' किया गया है। यह शब्द 'ध्यान करना' अर्थ वाली 'ध्या' धातु और 'आधार' अर्थ वाली 'धीङ्' धातु से निष्पन्न होता है। यदि 'ध्यान करना' अभीष्ट है, तो 'ध्या' धातु का ग्रहण किया जाएगा और यदि 'धारण करना' अर्थ अभीष्ट है, तो 'धीङ्' धातु से शब्दनिष्पत्ति होगी। स्वामी दयानन्द जी ने 'धीमहि' का अर्थ 'धारण करना' किया है।

सायण ने 'भर्गः धीमहि' का अर्थ निम्न प्रकार से किया है-

१. हम स्वयंज्योति परब्रह्मात्मक तेज का ध्यान करते हैं।

२. हम पापों के तापक तेजोमण्डल को ध्येयरूप से मन में धारण करें।

३. हम अन्नादिलक्षण फल को धारण करें।

स्वामी दयानन्द जी ने इसका अर्थ इस प्रकार किया है कि 'हम पापरूप दुःखों के मूल को नष्ट करने वाले प्रभाव को धारण करें।

स्वामी दयानन्द जी का अर्थ आध्यात्मिकता से ओतप्रोत है। भारतीय दर्शन में त्रिविध दुःखों की आत्यन्तिक निवृत्ति को अपवर्ग माना गया है। दुःखों का जब-तक सर्वथा उच्छेद न होगा, तब तक अपवर्ग या परमपुरुषार्थ की प्राप्ति न होगी। त्रिविध दुःखों का मूल पाप-रूप है, अतः उस मूल का विनाश करके परम पुरुषार्थ प्राप्य है। दुःखों का मूल नष्ट करने के लिए ईश्वर की कृपा का प्रभाव प्राप्त करना आवश्यक है। इस प्रकार ईश्वरीय कृपा के प्रभाव को धारण करने से पापरूप दुःखों का विनाश होगा और मोक्ष-प्राप्ति होगी। गायत्री त्रिविध दुःखों से स्तोता की रक्षा करती है, अतः दुःखात्यन्तनिवृत्ति करके परमेश्वर का सान्निध्य कराने के कारण इसे ब्रह्मगायत्री भी कहा जा सकता है। इस मन्त्र में जगदुत्पादक व प्रेरक परमेश्वर के 'सविता' नाम की विद्यमानता होने के कारण इसे सावित्री गायत्री कहा जाता है। स्वामी दयानन्द जी ने 'सविता' का अर्थ 'सकलजगदुत्पादक समग्र-ऐश्वर्य-युक्त परमेश्वर' किया है।

इस गायत्री में तीन पाद तो हैं, परन्तु वर्णसंख्या प्रत्येक पाद में सम नहीं है। प्रथम पाद में ७ वर्ण द्वितीय में ८ और तृतीय में ८ हैं। छन्दोविधान की दृष्टि से 'अपि माषं मषं कुर्याच्छन्दोभङ्गं न कारयेत्' अर्थात् माष को चाहे मष कर दिया जाय,

(शेष पृष्ठ 7 पर)

यदि देव दयानन्द न आते

अज्ञान, पाखण्ड के अन्धकर से, हो रहा देश बर्बाद था।
यदि देव दयानन्द न आते, तो न होता देश आजाद था।।
राम, कृष्ण की इस पावन भूमि में लग गई उनेकों बिमारी थी।
सीता, सावित्री, गार्गी को न पढ़ाने से रखी जाती भीतर चार दिवारी थी।।
तेरह वर्ष की कन्या, अस्सी वर्ष के बूढ़े से विवाह की हो जाती तैयारी थी।
जल्दी ही विधवा हो जाने से बाकी उम्र काटनी हो जाती बड़ी भारी थी।।
घर में इज्जत न होने से, नारकीय जीवन जीने की हो जाती उसे लाचारी थी।
नारी ही क्यों शूद्र भाईयों को प्रेम की जगह घृणा-द्वेष की चोट जाती मारी थी।।
जिससे दु:खित होकर, वे अपने ही भाई विधर्मी बनने तक की कर लेते तैयारी थी।
घटते जाते थे हमारे हिन्दू भाई समाप्त हो जाने की आ रही जल्दी ही बाकी थी।।
ऋषि दयानन्द ने आकर किया इलाज सुद्धि दवा से उस फोड़े का जिसमें पड़ गया मवाद था
यदि देव दयानन्द न आते...।।१।।

हमारी वैदिक संस्कृति में गाय, गायत्री, ब्राह्मण की इज्जत होती सब से न्यारी थी।
गऊ माता की तो बात न पूछो, उसके ऊपर तो चल रही जालिम की तेज कटारी थी।।
वेदों का पठन-पाठन बहुत वर्षों से बंद होने से, गायत्री माता भी फिर रही मारी-मारी थी।
ब्राह्मण वैदिक मार्ग छोड़ स्वीर्थ हो गये, कर दी अनेकों अवैदिक प्रथाएं जारी थी।।
स्वार्थ सिद्धि मुख्य ध्येय हो गया, लगा दी पेट भरने में ही अपनी बुद्धि सारी थी।
मूर्ति पूजा, मृतक-श्राद्ध तो थे ही, कई देवी-देवताओं की कथा पढ़ी जाने लगी न्यारी थी।।
वैदिक आधार पंच महायज्ञों, वर्णा-आश्रमों, संस्कारों की हालत होती जा रही अति माड़ी थी।
ऐसे में देव दयानन्द आये किया वेदों का प्रचार, तब से वेदों को किया जाने लगा याद था।।
यदि देव दयानन्द न आते...।।२।।

आर्य समाज स्थापना दिवस मनाया

आर्य समाज मंदिर फतेहगढ़ चूड़िया तहसील बटाला जिला गुरदासपुर में आर्य समाज स्थापना दिवस एवं नवसम्वत्सर बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर प्रात: 6.30 बजे से 7.30 बजे तक हवन यज्ञ किया गया। इसके पश्चात प्रमुख वक्ता श्री सतीश कुमार सच्चर मंत्री आर्य समाज ने आर्य समाज स्थापना दिवस एवं नवसम्वतसर पर विस्तार से आर्यजनों को बताया। उन्होंने बताया कि आर्य समाज की स्थापना करके महर्षि दयानन्द सरस्वती जी एक ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते थे, जहां पर किसी के साथ कोई भेदभाव न हो। जाति, मत, पन्थ और सम्प्रदाय की तरह कोई व्यवहार न करे। सभी समान विचार वाले होकर सबके कल्याण के लिए मिलकर कार्य करें। समान विचार वाले होकर राष्ट्र की उन्नति के लिए कार्य करें। इसलिए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने अपने द्वारा स्थापित समाज को आर्य समाज का नाम दिया। आर्य का अर्थ श्रेष्ठ होता है अर्थात् जिनके विचार शुद्ध, आचार शुद्ध, व्यवहार और खान-पान शुद्ध होता है वही व्यक्ति आर्य कहलाने का अधिकारी है। आर्य समाज व्यक्तियों के उस समूह का नाम है जहां पर आपस में कोई क्लेश, लड़ाई, झगड़ा नहीं है। सबके विचारों को सम्मान दिया जाता है। सबकी बातों पर अमल किया जाता है।

आर्य समाज के सिद्धान्त और नियम सार्वभौम हैं। आर्य समाज के नियम वेदों पर आधारित हैं। इन नियमों में किसी एक की उन्नति नहीं परन्तु सबकी उन्नति की कामना की जाती है। इसलिए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज के नौवें नियम में लिखा कि-प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिए अपितु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का उद्देश्य सारे संसार का कल्याण करना था । वे किसी व्यक्ति विशेष के लिए नहीं अपितु सर्वे भवन्तु सुखिन: की भावना को लेकर कार्य करते थे। यही कारण है कि आर्य समाज ने सभी क्षेत्रों में कार्य किया। आर्य समाज किसी के दबाव में नहीं आया और गलत का खुलकर विरोध किया। इसी कारण से आर्य समाज एक समाज सुधारक के रूप में सामने आया। शांति पाठ के पश्चात ऋषि लंगर का आयोजन किया गया।

-सतीश कुमार सच्चर मंत्री

पृष्ठ 6 का शेष-**गायत्रीमन्त्र और स्वामी दयानन्द**

परन्तु छन्दोभङ्ग नहीं होना चाहिए, इस सिद्धान्त के अनुसार पादपूर्त्यर्थ 'वरेण्यम्' को 'वरेणियम्' उच्चारण किया जाना चाहिए, परन्तु वेद-मन्त्रों का पाद-पूर्त्यर्थ वर्ण बढ़ाकर उच्चारण करना कुछ उचित नहीं प्रतीत होता, जबकि वह मन्त्र छन्द के अन्य भेदों में रखा जा सकता है। निचृत्-गायत्री में एक वर्ण की कमी होती है, अत: सावित्री-गायत्री को निचद्-गायत्री मानकर बिना वर्ण बढ़ाये ही उच्चारण किया जा सकता है।

गायत्रीमन्त्र के तात्पर्य को हृदयङ्गम कराते हुए स्वामी दयानन्द जी कहते हैं, कि जो मनुष्य सभी के साक्षी, पिता के समान वर्तमान, न्यायकर्त्ता, दयालु, शुद्ध सनातन, सर्वात्मसाक्षी परमात्मा की प्रार्थना करके उसकी उपासना करते हैं, उन लोगों को कृपा-सागर परमगुरु दुराचार से हटाकर सदाचार में प्रवर्तित करके उन्हें शुद्ध बनाकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूपी पुरुषार्थों से अन्वित कर देता है। इस प्रकार स्वामी दयानन्द जी कृत गायत्री-मन्त्र-भाष्य के अनुशीलन से यह स्पष्ट होता है, कि ऐहिक और पारलौकिक श्रेयस् की प्राप्ति के लिए परमपिता परमेश्वर उपासनीय है।

आर्य समाज नंगल टाऊनशिप का 69 वां वार्षिकोत्सव

आर्य समाज नंगल टाऊनशिप का 69वां वार्षिकोत्सव दिनांक 9 मई वीरवार से 12 मई 2019 रविवार तक बड़ी धूमधाम के साथ मनाया जा रहा है। इस अवसर पर आर्य जगत् के उच्चकोटि के विद्वान् महात्मा चैतन्यमुनि जी, माता सत्याप्रिया जी एवं भजनोपदेशक श्री जगत वर्मा जी पधार रहे हैं। 9, 10, 11 मई को प्रात: 8:00 से 11:00 बजे तक तथा सायं 6:00 से 8:15 बजे तक यज्ञ, भजन व प्रवचन होंगे। 12 मई रविवार को यज्ञ की पूर्णाहुति होगी। 9:00 बजे अल्पाहार होगा। मुख्य कार्यक्रम 9:30 से 1:30 बजे तक चलेगा। आप सभी धर्मप्रेमी सज्जनों से निवेदन है कि अपने परिवार एवं इष्टमित्रों सहित इस यज्ञ में पधार कर इस उत्सव की शोभा बढाएं एवं तन, मन, धन से सहयोग करें।

-सतीश अरोड़ा प्रधान आर्य समाज नंगल

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

सहस्त्रशीर्षा पुरुष सहस्त्राक्ष: सहस्त्रपात्।
स भूमिंःसर्वत: स्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्।।

-यजु० ३१.१

भावार्थ-हे जिज्ञासु पुरुष! जिस पूर्ण परमात्मा में, हम मनुष्य आदि सब प्राणियों के, अनन्त शिर, नेत्र, पग आदि अवयव हैं, जो पृथिवी आदि से उपलक्षित पाँच स्थूल और पाँच सूक्ष्म भूतों से युक्त जगत् को अपनी सत्ता से पूर्ण कर, जहाँ जगत् नहीं वहाँ भी पूर्ण हो रहा है। उस जगत् कर्ता परिपूर्ण जगत्पति परमात्मा, चेतनदेव की उपासना करनी चाहिए। किसी जड़ पदार्थ को परमेश्वर मानना और उस जड़ पदार्थ को ही भोग लगाना, उसी को प्रणाम करना, पंखा व चामर फेरना महामूर्खता है। परमेश्वर ने ही सब जगत् के पदार्थों को बनाया, ईश्वर रचित उन पदार्थों में ईश्वरबुद्धि करके, उनको भोग लगाना महामूर्खता नहीं तो और क्या है?

आर्य कालेज के वार्षिक पुरस्कार समारोह में 550 विद्यार्थियों ने प्राप्त किये पुरस्कार

आर्य कालेज लुधियाना का वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह कालेज के भारती आडिटोरियम में आयोजित किया गया। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी ज्योति प्रज्वलित करके पुरस्कार वितरण समारोह का शुभारम्भ करते हुए। चित्र में बाएं से दाएं आर्य कालेज महिला विभाग की प्रभारी श्रीमती सूक्ष्म आहलूवालिया श्रीमती गुलशन शर्मा जी, आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महामंत्री श्री प्रेम भारद्वाज, कालेज सचिव श्रीमती सतीशा शर्मा जी, श्रीमती राजेश शर्मा जी, कालेज प्राचार्य डा. सविता उप्पल जी, सभा कोषाध्यक्ष श्री सुधीर शर्मा, डा. विजय सरीन, श्री रणवीर शर्मा, श्री मनोहर लाल आर्य जबकि चित्र दो में सभा प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी पारितोषिक देकर सम्मानित करते हुये। उनके साथ हैं सभा महामंत्री श्री प्रेम भारद्वाज जी, डा. सविता उप्पल जी, श्रीमती सूक्ष्म आहलूवालिया, सभा कोषाध्यक्ष श्री सुधीर शर्मा जी।

आर्य कालेज लुधियाना का वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह कालेज के भारती आडिटोरियम में आयोजित किया गया। इस अवसर पर अकादमिक, सांस्कृतिक और खेलों के क्षेत्र में विशेष उपलब्धियां हासिल करने वाले लगभग 550 विद्यार्थियों को सम्मानित किया गया। इस समारोह में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान एवं गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के पूर्व चांसलर श्री सुदर्शन कुमार शर्मा एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती गुलशन शर्मा जी मुख्य अतिथि के रूप में पधारे थे जबकि श्री प्रेम भारद्वाज जी महामंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब विशेष अतिथि के रूप में शामिल हुये। इनके साथ सभा कोषाध्यक्ष श्री सुधीर शर्मा जी भी पधारे थे। अतिथियों का स्वागत करते हुये कालेज प्रिंसीपल डा. सविता उप्पल ने कालेज विद्यार्थियों की गौरवशाली उपलब्धियों का विशेष रूप से जिक्र करते हुये अपनी रिपोर्ट पढ़ी।

इस अवसर पर अमनजोत सिंह, कृतिका गुप्ता, रोबिन मेहता, कुमारी नेहा, अंजलि, सोनाली, जागृति शर्मा, सरिता, गिरीश जैन, ईशान गुप्ता, विशाली, आंचल और तान्य को अकादमिक क्षेत्र में, परमजीत, प्रभजोत सिंह, बबरीक नाहर और जतिन्द्र सिंह को सांस्कृतिक गतिविधियों, गगन क्वात्रा और केतन चौधरी को खेलों के क्षेत्र में विशेष उपलब्धियों के लिये रोल आफ आनर प्रदान किये गये। इसी प्रकार सांस्कृतिक गतिविधियों के लिये कुमारी पूनम चौधरी, गौरव, पंकज बाली, तनवीर सिंह संधू, रिषम शर्मा, अमनदीप, गुरजीत सिंह बाजवा और चेतन, दिलदार को जबकि रघुवीर सिंह, गुरकीरत सिंह और सुशीला कुमारी को खेलों के क्षेत्र में विशेष उपलब्धियों के लिये कालेज कलर के साथ सम्मानित किया गया।

विद्यार्थियों को पुरस्कार बांटने के बाद मुख्यातिथि के रूप में पधारे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी ने कहा कि वर्तमान समय चुनौतियां से भरा हुआ है। इस दौर में वहीं युवा अपना विशेष स्थान बना सकेगा जो अधिक से अधिक परिश्रम करके अपने आप को अन्य लोगों से विशेष साबित कर पायेगा। उन्होंने विद्यार्थियों को और अधिक लग्न और परिश्रम के साथ अपनी प्रतिभा निखारने की आवश्यकता पर बल दिया। समारोह में विशेष अतिथि के तौर पर पधारे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महामंत्री श्री प्रेम भारद्वाज जी ने विजेता विद्यार्थियों को आशीर्वाद देते हुये कहा कि आर्य कालेज पंजाब की शिरोमणि शिक्षा संस्थानों में से एक है। उन्होंने कहा कि इस कालेज के साथ जुड़े हुये विद्यार्थी सदैव से ही शैक्षणिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक और खेलों आदि के क्षेत्र में प्रतिनिधित्व प्रदान करते आए हैं। कार्यक्रम के अंत में कालेज प्रबन्धकीय समिति की सचिव श्रीमती सतीशा शर्मा जी ने पधारे हुये अतिथियों का धन्यवाद करते हुये विजेता विद्यार्थियों के लिये भविष्य में और बड़ी उपलब्धियों की कामना की। समारोह में अन्य के अतिरिक्त प्रबन्धकीय कमेटी के सदस्यों डा. विजय सरीन जी, श्रीमती राजेश शर्मा जी, श्री रणवीर शर्मा, श्री मनोहर लाल जी आर्य, श्री अरुण सूद जी, श्री एस.एम. शर्मा जी ने भी अपनी उपस्थिति दर्ज कराई।

आर्य समाज दाल बाजार लुधियाना का चुनाव सम्पन्न

दिनांक 28 अप्रैल 2019 रविवार को आर्य समाज स्वामी दयानन्द बाजार (दाल बाजार) लुधियाना के सभासदों की एक बैठक हुई जिसमें आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की तरफ से पर्यवेक्षक के रूप में श्री अशोक परूथी जी एडवोकेट रजिस्ट्रार आर्य विद्या परिषद पंजाब और आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मंत्री श्री सुदेश कुमार जी की देखरेख में निर्वाचन प्रक्रिया शुरू हुई। बैठक की अध्यक्षता श्री अजय बतरा जी ने की।

सबसे पहले आर्य समाज के महामंत्री श्री सुरेन्द्र कुमार जी ने आर्य समाज की गतिविधियों से अवगत कराया। पिछले साल का लेखा जोखा श्री सुभाष अबरोल कोषाध्यक्ष जी ने पेश किया जो सर्वसम्मति से पारित किया गया। इसके पश्चात चुनाव की प्रक्रिया आरम्भ हुई। श्री संजीव चड्डा, श्री सुभाष अबरोल, श्री रमाकांत महाजन जी ने प्रधान पद के लिये श्री संत कुमार आर्य जी का नाम प्रस्तुत किया जिसका

श्री संत कुमार आर्य जी के आर्य समाज स्वामी दयानन्द बाजार (दाल बाजार) लुधियाना का सर्वसम्मति से प्रधान चुने जाने के पश्चात सभा पदाधिकारियों श्री अशोक परूथी जी एडवोकेट एवं श्री सुदेश कुमार जी के साथ चित्र खिंचवाते हुये।

अनुमोदन श्री सुरेन्द्र कुमार टंडन, श्री सुरेन्द्र कुमार शास्त्री, श्री बृजमोहन भंडारी, श्री अरूण सूद, श्री मोहित महाजन आदि ने किया। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के पर्यवेक्षक श्री अशोक परूथी जी एडवोकेट ने सभासदों से प्रधान पद के लिये और नाम के भी सुझाव मांगें। परन्तु किसी का नाम नहीं आया। इस पर श्री अशोक परूथी जी एडवोकेट ने श्री संत कुमार जी आर्य को प्रधान घोषित किया।

श्री संत कुमार जी ने प्रधान निर्वाचित होने पर सभा से आए हुये अधिकारियों का और सभासदों का धन्यवाद किया। एक अन्य प्रस्ताव में श्री संत कुमार जी को अधिकार दिया गया कि वह अपनी अन्तरंग सभा और पदाधिकारियों का गठन करें। श्री अशोक परूथी जी एडवोकेट ने अपने सम्बोधन में आर्य समाज महर्षि दयानन्द बाजार लुधियाना के गौरवमयी इतिहास के बारे में बताया और सभी से एकजुट होकर आर्य समाज का काम करने की अपील की। श्री सुदेश कुमार जी ने भी सभी का धन्यवाद किया।

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। **E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org**
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।